श्रेष्ठ अन्न को चाहने वाला इन्द्र

ओ३म् यद्द्धिषे प्रदिवि चार्वन्नं दिवेदिवे पीतिमिदस्य वक्षि । उत हृदोत मनसा जुषाण उशन्निन्द्र प्रस्थितान्पाहि सोमान्॥ ऋग्वेद ७.९८.२

पदार्थः (इन्द्र) हे विद्वन् ! (यत्) जो तुम (दिवे, दिवे) प्रतिदिन (चारु, अन्नम्) श्रेष्ठ अन्न को धारण करते हो और (प्रदिवि) गत दिनों में भी तुमने श्रेष्ठ अन्न को ही धारण किया और (अस्य) सौम्य स्वभाव बनाने वाले सोम द्रव्य के (पीतिम्, इत्) पान को ही (वक्षि) चाहते हो (उत) और (हृदा) हृदय से (उत) और (मनसा) मन से (जुषाणः) परमात्मा का सेवन करते हुए (उशन्) सबकी भलाई की इच्छा करते हुए तुम (प्रस्थितान्, पाहि, सोमान्) इन उपस्थित सोमपा लोगों को अपने उपदेशों द्वारा पवित्र करो॥

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

जब पितामह भीष्म यह उपदेश दे रहे थे, तो महारानी द्रौपदी ने कहा कि हे पितर! आपका यह उपदेश उस समय कहाँ था? उस काल में जब मैं रजोमय थी और मुझे महाराजा दुर्योधन इस सभा में, हस्तिनापुर के आङ्गन में मुझे नग्न करना चाहते थे? उस समय यह आपका ब्रह्ममय उपदेश कहाँ था? उस समय पितामह भीष्म बोले, हे देवी! हे पुत्री! मैं उस समय, क्योंकि राष्ट्र का मैंने पापमयी अन्न को ग्रहण किया था। अन्न से ही मानव के द्वारा मज्जा की उत्पत्ति होती है, ओज उत्पन्न होता है। उसी से बुद्धि का निर्माण होता है। मेरी बुद्धि उसी प्रकार की हो रही थी। मैं उस समय देखो, वशीभूत था अन्नादि के। मेरे प्यारे! देखो, और आज तेरे इस पवित्र अन्न से जो तू मुझे पान कराती है और मानो देखो, अर्जुन के तीखे बाणों ने रक्त का शोषण कर दिया है। आज मेरी बुद्धि निर्मल बन रही है। तो मेरे प्यारे! देखो, मेरा उत्तरायण आ गया है।

मुनिवरों! देखो, उत्तरायण सूर्य की प्रतीक्षा में नहीं था। वह देवता, वह ब्रह्मचारी इस प्रतीक्षा में था कि मुझे ज्ञान हो जाए, मुझे विवेक हो जाए। जिस समय मैं प्राणों का त्याग करने वाला हूँ। क्योंकि सूर्य का मानव के जीवन से, आत्मा से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। ज्ञान रुपी सूर्य से आत्मा का सम्बन्ध है।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है महाराजा भीष्म ने एक वर्ष चार दिवस में मुनिवरों! देखो, अपने शरीर को त्यागा था। इतने समय तक महारानी द्रौपदी उसे पवित्र गायत्री छन्दों से गुंथे हुए अन्न को पान, कराती रहती थी, मानो देखो, जिससे उसकी बुद्धि निर्मल हो गई, ज्ञान हो गया। क्योंकि ज्ञान तो

उन्हें पूर्व था। बाल्य काल में बहुत अध्ययन किया था। माता को वे ज्ञान देते रहते थे।

मुनिवरों! देखो, इसी प्रकार जो माता अपने पुत्र को यह चाहती है कि मेरा पुत्र पवित्र बने, मेरे पुत्र में महत्ता आ जाए तो माता गायत्री छन्दों का पठन पाठन करके जब माता अपने पुत्र को शुद्ध विचारों का भोज्य कराती है, तो वह माता सौभाग्यशालिनी होती है। उस माता के आभा में ही मानो देखो, पुत्रों! का जन्म होता है, आभा में ही पुत्रों! को महान बना देती है।

मेरे पुत्रो! मैं आज विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ। आज जैसे माता मन्दालसा का वर्णन आता रहता है। वे गर्भ से ले करके ५ वर्ष तक तो शिक्षा देती रहती थी। अन्नादि पवित्रता से ग्रहण कराती रहती थी। ब्रह्मवेत्ता बन जाते थे। पुत्र अहा! वह माता सौभाग्यशाली है जिस माता के गर्भ से ब्रह्मवेत्ता पुत्रां का जन्म होता है, बुद्धिमानो का जन्म होता है।